29 अक्टूबर, 1915 को अफगानिस्तान में बनी थी आजाद हिन्द सरकार, राजा महेंद्र प्रताप थे पहले राष्ट्रपति

29 अक्तूबर,1915 की तिथि भारत के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखी जानी चाहिये। इस दिन अफगानिस्तान में भारत की पहली स्वाधीन सरकार 'आजाद हिन्द सरकार' का गठन हुआ था। राजा महेन्द्र प्रताप इसके राष्ट्रपति थे और मोहम्मद बरकतुल्ला प्रधानमंत्री। इस सरकार के बनने के बाद भारत में अंग्रेजी हुकूमत हिल गई थी। इस सरकार की फौज ने भारत-अफगानिस्तान सीमा पर अंग्रेजों के खिलाफ हमला बोल दिया। अंग्रेजों के विस्तारवादी मंसूबों को करारी शिकस्त मिली थी। इस ऐतिहासिक घटना की पृष्ठभूमि क्या थी और कैसे यह सरकार बनी, यह विवरण भी बड़ा रोमांचक है।

धूर्त अंग्रेजों को भारत से खदेड़ने का पहला और व्यापक प्रयास ईस्ट इण्डिया कम्पनी के भारत में पैर पसारने के तुरंत बाद ही हुआ। 1757 में हुए प्लासी के युद्ध के बाद कम्पनी ने बंगाल-बिहार और उसके सात साल बाद हुए बक्सर के युद्ध में पूर्वी उत्तर प्रदेश पर अधिकार कर लिया। सन् 1772 में बंगाल के संन्यासियों ने अंग्रेजों के विरुद्ध संघर्ष का बिगुल बजा दिया। लगभग डेढ़ वर्ष तक इन शस्त्रधारी संन्यासियों ने कम्पनी की प्रशिक्षित सेना से जम कर युद्ध किया। इन्हीं तेजस्वी क्रांतिकारियों पर 'आनंद मठ' और 'देवी चौधुरानी' लिखे गये और इन्हीं तपस्वियों ने वंदेमातरम् का अचूक मंत्र देश को दिया।

इसके पश्चात 10 मई, 1857 से प्रथम स्वतंत्रता संग्राम का बिगुल बजा। 18 अप्रैल 1859 को तात्या टोपे का रूप धरे नारायण राव भागवत को दी गई फांसी के बाद यह महासमर समाप्त हुआ। इस देशव्यापी स्वतंत्रता संग्राम के महानायक नाना साहब पेशवा तथा सेनापति तात्या टोपे को अंग्रेज कभी बंदी नहीं बना सके। इस महासमर के 15 साल बाद ही पंजाब में क्रांति की एक और चिंगारी उठी। रामसिंह कूका के शिष्यों ने उस समय आजादी की हुंकार भरी। इसी के आस-पास सह्याद्रि की पहाड़ियों में वासुदेव बलवंत फड़के ने अंग्रेजों के खिलाफ सिंह गर्जना की। स्वतंत्रता की इस गर्जना से एकबारगी तो अंग्रेज बुरी तरह घबरा गये।

इसके बाद वर्ष 1893 में एक अद्भुत घटना घटी। शिकागो की धर्म-सभा में विश्ववंद्य स्वामी विवेकानन्द ने हिन्दुत्व के उद्घोष से पूरे विश्व को गुंजायमान कर दिया। यह भारत के जागने और अंग्रेजों की दासता को उतार फेंकने की भविष्यवाणी थी। इसके बाद से भारत की स्वतंत्रता हेतु किए जा रहे प्रयत्नों

में एक नई ऊर्जा आ गई। इसका प्रथम संकेत महाराष्टÑ में ही दृष्टिगोचर हुआ। एक मां के तीन पुत्र दामोदर, बालकृष्ण और वासुदेव चाफेकर, तीनों ही देश की आजादी के लिये फांसी पर चढ़ गये। उन्हीं के साथ महादेव रानाडे ने भी शहीदों में अपना नाम लिखा लिया। यह शहादत अप्रतिम थी और इस श्रेष्ठ आत्मोसर्ग ने स्वतंत्रता आन्दोलन के लिये एक नई जमीन तैयार कर दी।
क्रांतिकारी आन्दोलन में निर्णायक मोड़ 1905 में आया जब अंग्रेजों ने बंगाल को पूर्वी और पश्चिमी बंगाल में विभाजित करने का निर्णय लिया। बंग-भंग की इस घोषणा से देश, विशेषकर बंगाल में आक्रोश भड़क गया। पूरे देश में अंग्रेजों के खिलाफ एक जबर्दस्त माहौल बन गया। बंगाल में क्रांतिकारियों का एक जुझारू संगठन 'अनुशीलन समिति' के नाम से प्रारम्भ हुआ। अरविंद घोष अपनी लेखनी से आग बरसाने लगे और बंगाल के युवक अंग्रेजी राज की शव-यात्रा निकालने के लिये सशस्त्र क्रांति के अग्निपथ पर चलने लगे। उन्हीं दिनों हुई खुदीराम बोस, प्रफुल्ल चाकी तथा कन्हाई लाल दत्त और सत्येन्द्र बोस की शहादत ने देश को झकझोर दिया। इसी बंग-भंग के परिणामस्वरूप हुए विस्फोट में पूना में स्वातंत्र्यवीर सावरकर ने पहली बार विदेशी वस्त्रों की होली जलाई।
स्वतंत्रता आन्दोलन के क्षितिज पर इस समय विनायक सावरकर, लाला हरदयाल और रासबिहारी बोस का उदय हो रहा था। क्रांतिकारियों के पितामह श्यामजी कृष्ण वर्मा स्वयं को भारत की स्वतंत्रता के लिये पहले ही समर्पित कर चुके थे और क्रान्ति के एक अन्य महानायक शचीन्द्रनाथ सान्याल का आगमन इतिहास के गर्भ में था। अब भारत के अतिरिक्त इंग्लैण्ड, अमरीका, कनाडा, जर्मनी, फ्रांस आदि बाहर के देशों में भी भारत की आजादी का अलख जगाया जाने लगा था। वीर सावरकर ने इंग्लैण्ड में बेरिस्टरी पढ़ते हुए '1857 का प्रथम स्वतंत्र्ता संग्राम' जैसे अद्भुत ग्रंथ की रचना की। उन्हीं की प्रेरणा से लन्दन में मदनलाल धींगरा ने शहादत का अनुपम उदाहरण प्रस्तुत किया। इसी समय नासिक में अनन्त लक्ष्मण कान्हेरे ने नासिक के अंग्रेज जिलाधीश को यमलोक पहुंचा कर फांसी का फंदा चूमा।

आखिरकार अंग्रेज सरकार को बंगाल के विभाजन का निर्णय रद्द करना पड़ा। इंग्लैण्ड की सरकार ने वायसराय के रूप में भारत का नया मुखिया लार्ड हार्डिंग्ज को बनाया। बंगाल के क्रांतिकारियों से आजिज आ नये वायसराय ने कोलकाता के स्थान पर दिल्ली को भारत की नई राजधानी बनाने का निर्णय किया। 23 दिसम्बर,1912 के दिन लार्ड हार्डिंग्ज ने गाजे-बाजे और बड़े भारी जुलूस के साथ नई राजधानी दिल्ली में प्रवेश किया। पर तभी एक अनहोनी हो गई। चांदनी चौक में वायसराय के हाथी पर जबर्दस्त सुरक्षा के बीच एक शक्तिशाली बम का प्रहार हो गया। हार्डिंग्ज की जान तो बच गई, लेकिन अंग्रेज सरकार की मानो नाक ही काट ली गई। इस बम प्रहार के सूत्रधार थे महान क्रांतिकारी रासबिहारी बोस और वायसराय का मान-मर्दन करने वाले क्रांतिकारी बसंत कुमार विश्वास। 11 मई 1915 को इस कार्रवाई में शामिल मास्टर अमीरचंद, भाई बालमुकुन्द, अवध बिहारी और बसंत कुमार को फांसी का पुरस्कार मिला। प्रताप सिंह बारहठ की जेल में पुलिस यातनाओं से शहादत हुई। यह 2015 का वर्ष उन देशभक्तों की शहादत का शताब्दी वर्ष है।

वर्ष 1913 के प्रारम्भ में इंग्लैण्ड और जर्मनी में तना-तनी बढ़ने लगी थी। सशस्त्र क्रांति के भारतीय धुरंधरों को लगने लगा था कि दोनों महाशक्तियों में युद्ध होकर रहेगा। प्रथम विश्व युद्ध की भूमिका इस समय लिखी जाने लगी थी। वीर सावरकर और उनके दोनों भ्राता इस समय अन्दमान में काले-पानी की सजा काट रहे थे। भारत में रासबिहारी बोस और शचीन्द्र सान्याल ने एक मजबूत क्रांतिकारी संगठन

खड़ा कर लिया था। लाला हरदयाल, भाई परमानन्द, करतार सिंह सराबा और विष्णु गणेश पिंगले जैसे दिग्गज क्रांति-नायक अमरीका में थे। चम्पक रमण पिल्लै, मौलाना बरकतुल्ला तथा डॉ. मथुरा सिंह सहित कई क्रांतिकारी जर्मनी में जर्मनी और इंग्लैण्ड की दुश्मनी का लाभ उठाने की चेष्टा कर रहे थे।

इस समय भारत को स्वतंत्र कराने के लिये क्रांतिकारियों ने एक योजना का ताना-बाना बुना जिसका स्वरूप 1857 के प्रथम स्वतंत्रता आन्दोलन जैसा ही व्यापक था। पहले विश्व युद्ध को अवश्यम्भावी मानकर लाला हरदयाल ने 21 अप्रैल 1913 को अमरीका के सान फ्रांसिस्को नगर में 'गदर पार्टी' की स्थापना की। इसी के साथ पूरी दुनिया में जाने वाला साप्ताहिक अखबार 'गदर' शुरू किया गया, जिसके सम्पादक करतार सिंह सराबा बने। गदर पार्टी ने कनाडा और अमरीका में रह रहे भारतीयों को सशस्त्र क्रांति में भागीदारी के लिये भारत भेजना शुरू किया। 'कोमा-गाटा-मारू' जहाज का पूरा घटनाक्रम इसी योजना का परिणाम था। रास बिहारी बोस और शचीन्द्र सान्याल ने गदर पार्टी की शाखा भारत में स्थापित कर जीवट वाले नौजवानों का एक प्रभावी संगठन खड़ा कर दिया था। यह संगठन उत्तर भारत की सैनिक छावनियों में भारतीय जवानों से सम्पर्क साधने लगा। बंगाल और बिहार में बाघा जतीन यही कार्य कर रहे थे। पूरे देश में एक साथ क्रांति करने का खाका तैयार कर लिया गया। योजना को अंतिम रूप देने के लिए करतार सिंह सराबा और विष्णु पिंगले भारत आ गये।

28 जुलाई 1914 को प्रथम विश्व युद्ध का नगाड़ा बज गया। गदर पार्टी ने सैनिक छावनियों के भारतीय सैनिकों को अंग्रेजों के खिलाफ शस्त्र उठाने के लिये तैयार कर लिया था। इंग्लैण्ड युद्ध में उलझा हुआ था और ऐसे समय में भारतीय सैनिकों का अंग्रेजों के विरोध में शस्त्र उठाना अंग्रेज सरकार के लिये भारी समस्या बन जाता। बर्लिन में डा. पिल्लै, डा. भूपेन्द्र नाथ दत्त (स्वामी विवेकानन्द के अनुज), ओबेदुल्ला सिंधी, डॉ. मथुरा सिंह आदि क्रांतिकारियों ने बर्लिन कमेटी बना ली थी। यह कमेटी हथियारों से लदे जहाज भारत की गदर पार्टी को भेजने लगी।
पूरे भारत में स्वतंत्रता का रण-यज्ञ प्रारम्भ करने की तिथि 21 फरवरी 1915 तय हो गई। इसी के साथ तय हुआ कि बर्लिन में भारत की एक आजाद हिन्द सरकार गठित कर ली जाये, जो संघर्ष के काल में स्वतंत्र भारत का प्रतिनिधित्व करे। लाला हरदयाल अमरीका से बर्लिन आ गये और वृन्दावन रियासत के राजा महेन्द्र प्रताप भी भारत से बर्लिन पहुंच गये। लाला हरदयाल के प्रयत्नों से राजाजी जर्मनी के प्रमुख काइजर से मिले, लेकिन काइजर बर्लिन में भारत की अस्थाई सरकार बनवाने के लिये तैयार नहीं हुए।

उधर बर्लिन कमेटी ने हथियारों के जो जहाज भारत भेजे थे उनमें से अधिकांश पकड़े गये। अंग्रेजों को शक हो गया कि कोई बड़ा धमाका होने वाला है। उनका खुफिया विभाग चौकन्ना हो गया और एक जासूस गदर पार्टी में घुसने में सफल हो गया। पाल सिंह नाम के इस भेदिये ने सशस्त्र क्रांति की पूरी योजना का पता लगा लिया। फलस्वरूप पूरे उत्तर भारत में क्रांतिकारियों की धर-पकड़ प्रारम्भ हो गई। इसी के साथ सैनिक छावनियों के भारतीय सैनिकों को पूरी तरह नि :शस्त्र कर दिया गया। विष्णु गणेश पिंगले तथा करतार सिंह सराबा सहित गदर पार्टी के सभी प्रमुख क्रांतिकारी पाल सिंह की मुखबिरी पर बंदी बना लिये गये। तुरंत न्यायिक प्रक्रिया शुरू हो गई और 16 नवम्बर, 1915 को पिंगले और सराबा सहित सात क्रांतिकारियों को फांसी का पुरस्कार मिल गया।

यह वर्ष उक्त श्रेष्ठ क्रांतिकारियों की शहादत का भी शताब्दी वर्ष है और बाघा जतिन तथा चित्तप्रिय चौधरी की शहादत का भी सौवां साल है। बर्लिन कमेटी के क्रांतिकारियों को स्वतंत्रता का उक्त प्रयास सफल न होने पर निराशा तो हुई, लेकिन उन्होंने भारत के बाहर भारत की सरकार बनाने का प्रयत्न नहीं छोड़ा। जर्मनी के राजा काइजर जब तैयार नहीं हुए तो उन्होंने अफगानिस्तान में 'आजाद हिन्द सरकार' बनाने की कोशिश शुरू की। राजा महेन्द्र प्रताप काइजर से मिले और उन्हें समझाया कि भारत के पड़ोस में स्थित अफगानिस्तान में आजाद हिंद सरकार बनी तो इससे अंग्रेज कमजोर होंगे। काइजर को बात समझ में आ गई और उसने अफगानिस्तान के अमीर के नाम एक पत्र लिख दिया। काफी बड़ी धन-राशि भी राजाजी को दी गई। अफगानिस्तान जाने के लिये एक 'इंडो-जर्मन मिशन' बनाया गया जिसमें जर्मनी के भी कुछ अधिकारी शामिल थे। राजाजी के साथ मौलाना मोहम्मद बरकतुल्ला भी इस मिशन में थे।

राजा महेन्द्र प्रताप ऑस्ट्रिया, हंगरी, बुल्गारिया और तुर्की होते हुए 1915 की 6 सितंबर के दिन अफगानिस्तान पहुंच गये। राजधानी काबुल में उन्होंने वहां के शासक अमीर हबीबुल्ला खान से भेंट की। इंडो-जर्मन मिशन के अन्य सदस्य भी अमीर से मिले। अमीर अफगानिस्तान में 'आजाद हिन्द सरकार' की स्थापना के लिये सहमत हो गया।

आखिर वह ऐतिहासिक दिन आया। 29 अक्तूबर 1915 के दिन काबुल में स्वाधीन भारत की पहली सरकार की स्थापना हुई। इसके राष्ट्रपति राजा महेन्द्र प्रताप, प्रधानमंत्री मौलाना मोहम्मद बरकतुल्ला और विदेश मंत्री डॉ. चम्पक रमण पिल्लै बने। ओबेदुल्ला सिंधी इस सरकार के गृहमंत्री और डॉ. मथुरा सिंह बिना विभाग के मंत्री बनाये गये। जर्मनी और अफगानिस्तान सहित इंग्लैण्ड से शत्रुता रखने वाले कुछ और देशों ने इसे मान्यता भी दे दी। अब यह सरकार अधिकाधिक रूप से अन्य देशों से भारत की स्वतंत्रता के लिये सहायता प्राप्त कर सकती थी।

अफगानिस्तान में आजाद हिन्द सरकार की घोषणा से अंग्रेजों के कान खड़े हो गये। उन्होंने अफगानिस्तान में अपने गुप्तचरों का जाल बिछा दिया। राजा जी ने तुर्की और रूस में आजाद हिन्द सरकार के प्रतिनिधिमण्डल भेजे। तुर्की ने तो सहायता का पूरा भरोसा दिया पर रूस के जार ने विश्वासघात किया। आजाद हिन्द सरकार के प्रतिनिधिमण्डल को ताशकन्द में उसने बंदी बना कर अंग्रेजों को सौंप दिया। डा ॅ मथुरा सिंह उक्त दल की अगुआई कर रहे थे। अंगे्रजों ने डॉ. मथुरा सिंह को फांसी पर चढ़ा दिया।इस अस्थायी सरकार ने अब अपनी सेना का गठन शुरू किया। इस सेना को 'आजाद हिन्द फौज' नाम दिया गया। द्वितीय विश्व युद्ध के समय सुभाष बोस के नेतृत्व में जो सेना बनी उसका भी यही नाम था। शीघ्र ही इस फौज के सैनिकों की संख्या छह हजार हो गई। इसमें भी विश्व-युद्ध के समय जर्मनी और तुर्की द्वारा बन्दी बनाये गये भारतीय सैनिक थे। ये अंग्रेजों की ओर से युद्ध करते हुए पकड़े गये थे।

'आजाद हिंद फौज' ने योजना बना कर भारत की मुक्ति के लिये भारत-अफगानिस्तान सीमा पार कर हमला बोल दिया। यह फौज कबाइली क्षेत्र में काफी अन्दर तक घुस गई। इसी समय परिस्थिति ने करवट ली। विश्व युद्ध में जर्मन-तुर्की गठजोड़ हारने लगा। अंग्रेजों का हौसला बढ़ गया और उन्होंने पूरी ताकत से आजाद हिन्द फौज पर आक्रमण कर दिया। अफगानिस्तान का अमीर भी इस बीच अंग्रेजों से मिल गया, फलस्वरूप आजाद हिन्द फौज छिन्न-भिन्न हो गई। 'आजाद हिन्द सरकार'को

आखिरकार अफगानिस्तान से हटना पड़ा। राजा जी जर्मनी, रूस आदि देशों की यात्रा करते हुए जापान पहुंच गये। मौलाना मोहम्मद बरकतुल्ला भी अफगानिस्तान छोड़ कर जर्मनी होते हुए अमरीका चले गये। डा. पिल्लै जर्मनी में ही रहे। भारत के स्वाधीनता संग्राम से जुड़ा यह पूरा प्रकरण इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इसके100 वर्ष पूरे होने पर हर देशवासी को इसका स्मरण होना ही चाहिए।

राजा महेन्द्र प्रताप

राजा महेन्द्र प्रताप भरतपुर के महाराजा सूरजमल के वंशज थे तथा वृन्दावन के राजा थे। पहली 'आजाद हिन्द सरकार' की असफलता के बाद 1918 में वे रूस पहुंचे। वहां उस समय बोल्शेविक क्रांति हो चुकी थी। लेनिन ने राजा जी का गर्मजोशी से स्वागत किया। 1919 में अफगानिस्तान में सत्ता बदली। हबीबुल्ला खां की हत्या हो गई और उसका पुत्र अमानुल्ला खां वहां का शासक बना। अमानुल्ला राजा जी का मित्र था अत : वे पुन : अफगानिस्तान आ गये। उनके कहने पर अफगानिस्तान ने भारत के अंग्रेज शासकों पर आक्रमण कर दिया। धूर्त अंग्रेजों ने अमानुल्ला खां से संधि कर उसे मित्र बना लिया। अब राजा जी ने अफगानिस्तान छोड़ दिया। एशियाई देशों को सहायता के लिये टटोलते हुए वे 1925 में जापान पहुंच गये। जापान में उस समय प्रसिद्ध क्रांतिकारी रासबिहारी बोस और आनंद मोहन सहाय भारत की आजादी के लिये प्रयत्न कर रहे थे। ओसाका में राजा महेन्द्र प्रताप की दोनों क्रांतिकारियों से भेंट हुई तथा भविष्य की योजनाओं पर विचार हुआ। उधर अंग्रेजों के दबाव में जापान सरकार ने राजा जी को जापान छोड़ देने को कहा। जापान से वे मौलाना बरकतुल्ला के साथ अमरीका पहुंच गये। सन् 1946 में राजा जी को भारत आने की अनुमति मिली। स्वतंत्र भारत में वे मथुरा से विधायक एवं सांसद रहे।

मौलाना मोहम्मद बरकतुल्ला

पहली 'आजाद हिन्द सरकार' के प्रधानमंत्री मौलाना मोहम्मद बरकतुल्ला जाने-माने पत्रकार थे। उनके लेख इंग्लैण्ड और अमरीका के बड़े-बड़े समाचार पत्रों में छपते थे। 1909 में जापान में उन्होंने 'इस्लामिक बिरादराना' नाम से एक साप्ताहिक अखबार शुरू किया। यह अखबार अंग्रेजी राज के खिलाफ आग उगलता था। इंग्लैण्ड की सरकार ने जापानियों पर मौलाना साहब को बंदी बनाने का दबाव बनाया। इसकी भनक लगते ही वे जापान से निकलकर 1912 में अमरीका पहुंच गये। उस समय लाला हरदयाल अमरीका और कनाडा के भारतीयों में आजादी की अलख जगा रहे थे। वे भी लालाजी के साथ हो गये।

21 अप्रैल 1913 के दिन अमरीका के सान फ्रांसिस्को में गदर पार्टी की स्थापना हुई। मौलाना बरकतुल्ला ने भी इसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। कुछ समय बाद लाला हरदयाल को अमरीका छोड़ना पड़ा। लालाजी के स्थान पर तब मौलाना बरकतुल्ला ही गदर पार्टी के महामंत्री बने। कुछ समय पश्चात वे भी लाला हरदयाल के पीछे-पीछे जर्मनी जा पहुंचे। बर्लिन उन दिनों भारत के क्रांतिकारियों का गढ़ बना हुआ था। अब अफगानिस्तान में भारत की पहली स्वाधीन सरकार बनी तो प्रधानमंत्री के लिये वे ही सबसे उपयुक्त माने गये। इस 'आजाद हिंद सरकार' के भंग होने के बाद वे कई देशों में भारत की स्वतंत्रता के लिये समर्थन जुटाने गये। 1925 में राजा महेन्द्र प्रताप उन्हें पुन : अमरीका ले गये। 27 सितम्बर1927 के दिन अमरीका के सान-फ्रांसिस्को नगर में उनका निधन हुआ।

डा॰ चम्पक रमण पिल्लै

15 सितम्बर 1891 को तिरुअनंतपुरम में चम्पक रमण का जन्म हुआ। वे अत्यंत मेधावी थे तथा 12 भाषाएं धाराप्रवाह रूप से लिख, बोल और पढ़ सकते थे। वर्ष 1908 में तिरुअनंतपुरम से एफ़ ए (बारहवीं) परीक्षा पास कर वे आगे की पढ़ाई के लिये जर्मनी की राजधानी बर्लिन आ गये। यहां उन्होंने इंजीनियरिंग सहित तीन विषयों में पी.एचडी. की। 1914 में पिल्लै ने भारत की आजादी के लिये बर्लिन में ही 'भारतीय राष्टÑीय दल' का गठन किया। स्वामी विवेकानन्द के अनुज भूपेन्द्रनाथ दत्त भी इस दल में थे। लाला हरदयाल के बर्लिन पहुंचने पर इस दल का नाम 'बर्लिन कमेटी' हो गया। जर्मनी में मौजूद सभी क्रांतिकारी इस कमेटी के सदस्य बन गये। जर्मन सरकार ने डा॰ चम्पक रमण की क्षमताओं को परखते हुए उन्हें देश का 'सलाहकार इंजीनियर' बना दिया। कुछ समय पश्चात उनको जर्मन पनडुब्बी 'एमडन' का कमाण्डर बनाया गया। कमाण्डर पिल्लै ने पनडुब्बी की कमान सम्भालते ही एक साहसिक योजना बनाई।

उस समय वीर सावरकर अन्दमान में काले पानी की सजा भुगत रहे थे। अपनी पनडुब्बी से अन्दमान पर अधिकार कर वीर सावरकर को छुड़ा लाने का निश्चय कर वे जर्मनी से निकल पड़े। समुद्र की गइराई में जर्मनी से अन्दमान का रास्ता तय करते हुए वे अन्दमान के निकट पहुंच गये। पर 11 नवम्बर, 1914 को अन्दमान के पास बिट्रिश नौसेना ने उनकी पनडुब्बी को नष्ट कर दिया। पिल्लै किसी तरह बच निकले और भारत आ गये। अंग्रेजों ने उन पर उस जमाने में एक लाख रुपये का इनाम घोषित कर दिया। चम्पक रमण अंग्रेजों के इस जाल को भी तोड़ने में सफल हुए और अफगानिस्तान जा पहुंचे, जहां उन्हें आजाद हिन्द सरकार का विदेश मंत्री बनाया गया। जर्मनी ने उन्हीं दिनों डा. पिल्लै को 'जर्मन राष्टÑवादी दल' का सदस्य बना कर सम्मानित किया। प्रथम विश्व युद्ध समाप्त होने के बाद वहीं रहते हुए वे भारत की आजादी के लिये प्रयत्न करते रहे। कुछ वर्षों बाद जर्मनी में नाजी-पार्टी और हिटलर का प्रभाव बढ़ गया। प्रखर स्वाभिमानी और राष्टÑ भक्त होने के नाते हिटलर की नीतियों से उनका ताल-मेल नहीं बैठा। एक बार हिटलर की उन्होंने आलोचना भी कर दी। परिणाम यह हुआ कि नाजियों ने उन्हें जहर दे दिया। 23 मई1934 को इस महान क्रांतिकारी ने अंतिम सांस ली।

साभार-http://www.panchjanya.com/ से